(1)

Q.12 नैतिक प्रत्ययों के रूप में 'कर्तव्य' तथा 'दायित्व' की व्याख्या कीजिए।

B.A Part II
III Paper

Explain 'Duty' and 'obligation' as ethical Concepts.

Ans :→ कर्तव्य एक प्रकार की नैतिक जिम्मेदारी है जिसे संभालने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को तैयार रहना चाहिए। कर्तव्य का अर्थ है 'जो करना चाहिए', जो हमारा दायित्व है। नैतिक प्राणी होने के कारण जो हमें करना चाहिए, वही कर्तव्य है। कर्तव्य और दायित्व में अविभाज्य सम्बन्ध (Inseparable relation) है। नैतिक कर्तव्य का पालन नैतिक दायित्व है और अनैतिक कर्मों का त्याग भी नैतिक दायित्व के ही अन्तर्गत आता है। कर्तव्य और दायित्व सापेक्ष हैं। कर्तव्य अर्थात वैसा कर्म जो करना चाहिए, मनुष्य के नैतिक जीवन का तत्व है। मनुष्य को क्या करना चाहिए, इसी का ज्ञान ही नैतिक ज्ञान का सार है। कर्तव्य मनुष्य के विवेक और वासनाओं के द्वन्द्व का संकेत करता है। यदि यह द्वन्द्व नहीं होता और जैसा चाहिए वैसा ही कर्म मनुष्य करता तो फिर कर्तव्य की आवश्यकता ही नहीं होती। विवेक और वासना में द्वन्द्व होने के कारण ही ये दोनों, व्यक्ति को अपनी ओर खींचते हैं। दूसरे शब्दों में - वैसे कर्म जिनकी संगति नैतिक आदर्श से हो, वे कर्तव्य हैं और वह उन्हें करने के लिए बाध्य होता है। जो उचित है, वही कर्तव्य है। कर्तव्य एक प्रकार का नैतिक ऋण है जो मनुष्य को चुकाना चाहिए। कर्तव्य के साथ दायित्व जुड़ा हुआ है। कर्तव्य में ही दायित्व का भाव है। ज्योंही हमें किसी कर्तव्य का ज्ञान होता है, त

Scanned with CamScanner

पालन करना हमारा दायित्व हो जाता है। इस प्रकार कर्तव्य और दायित्व अभिन्न रूप से सदैव साथ रहते हैं।

जब हम किसी कर्म को सत समझते हैं तो उसे करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। जब हम किसी कर्म को असत समझते हैं तो उसका त्याग भी हमारा कर्तव्य हो जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि सत का पालन करना कर्तव्य है और असत का पालन करना अकर्तव्य है। कर्तव्य नैतिक बाध्यता है। कर्तव्य मनुष्य को अन्य प्राणियों से पृथक करता है। नैतिक नियमों का नियमितरूप से पालन करना ही कर्तव्य है। कर्तव्य सद्‌गुणों (जैसे- विवेक, सच्चरित्रता आदि) को जन्म देता है। कर्तव्यपरायण व्यक्ति महान चरित्रवाला एवं अनुकरणीय है। कर्तव्यविमुख व्यक्ति चरित्रहीन एवं निन्दनीय समझा जाता है।

वासना मनुष्य को उचित या अनुचित का विचार छोड़कर कर्म करने की सलाह देती है। किन्तु विवेक या बुद्धि का मुख्य काम व्यक्ति को उचित-अनुचित का अन्तर बतलाना है। विवेक हमे उचित काम करने और अनुचित कर्म के त्याग की सलाह देता है। जब व्यक्ति के अन्दर वासना और बुद्धि के बीच संघर्ष या द्वन्द्व (Conflict) छिड़ता है तो वह उचित कर्म करने की बाध्यता महसूस करता है। और यह उचित कर्म नैतिकता के नियम के अनुकूल है। यही कर्तव्य है। अतः कर्तव्य एक प्रकार का नैतिक ऋण है जिसे चुकाना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म हो जाता है। कभी-कभी कई कर्तव्यों के एक साथ होने पर उनमे विरोध दीख पड़ता है। जैसे - यदि किसी व्यक्ति के यहाँ भागता हुआ एक निर्दोष बालक छिप जाता है और उसका पीछा करने वाले कुछ बदमाश उस व्यक्ति से बालक के विषय में

पूछते है तो उस व्यक्ति के अन्दर एक प्रकार का कर्त्तव्य संघर्ष छिड़ जाता है। यहाँ 'सत्यभाषण' और 'बालक की रक्षा' दोनों कर्त्तव्य है।

कभी-कभी कर्त्तव्य का प्रयोग सीमित अर्थ में किया जाता है। इस संकीर्ण अर्थ में कर्त्तव्य वह है जो बाध्य-सत्ता-निर्मित द्वारा संचालित या निर्धारित हो। जो कर्म नियमो से परे (अधिक) हो उसे कर्त्तव्य से अधिक समझा जाता है। जैसे - यदि किसी श्रमिक ने अपनी निश्चित अवधि से एक घंटा अधिक काम किया तो कहा जाता है कि उसने कर्त्तव्य से अधिक काम किया है। परन्तु नैतिक दृष्टि से यह मत मान्य नही है। यह ठीक है कि एक घण्टा जो अधिक काम किया गया, उसके लिए कोई वैधानिक बाध्यता नही है। परन्तु वैधानिक बाध्यता और नैतिक बाध्यता मे अन्तर है जो वैधानिक दृष्टि से कर्त्तव्य से अधिक है, वह नैतिक दृष्टि से कर्त्तव्य हो सकता है। यदि व्यक्ति कर्त्तव्य से अधिक करता है तो इसका अर्थ यह है कि उसने जो अधिक किया वह कर्त्तव्य नही है। अतः व्यक्ति को अपने कर्त्तव्य से अधिक कार्य करते हुए पुण्य कमाने की बात नहीं सोचनी चाहिए।

कुछ विचारकों ने प्राकृतिक और बनावटी कर्त्तव्य का भेद बतलाया है। वैसे कर्त्तव्य, जो प्राकृतिक सम्बन्धों से, अर्थात मनुष्य के स्वभाव के कारण है, उन्हे प्राकृतिक कर्त्तव्य कहा जाता है। जैसे - पिता-पुत्र का सम्बन्ध प्राकृतिक कर्त्तव्य है अतः पिता का अपने पुत्र की ओर जो

है वह प्राकृतिक कर्तव्य हुआ।
जैसे कर्तव्य जो बनावटी सम्बन्धो से मिलते हैं, वह बनावटी कर्तव्य कहा जाता है। परन्तु यहाँ पर हमे यह ध्यान रखना होगा कि सभी कर्तव्य मनुष्य की नैतिक प्रकृति से ही मिलते है। अतः सभी कर्तव्य प्राकृतिक है।

काण्ट दार्शनिक के अनुसार कर्तव्य के दो भेदो को बतलाये है - (i) पूर्णबाध्यता मूलक कर्तव्य (duties of Perfect obligation) और (ii) अपूर्णबाध्यता मूलक कर्तव्य (duties of imperfect obligation) ।

पूर्णबाध्यतामूलक कर्तव्य जो राजकीय कानूनो द्वारा नियन्त्रित होते है और इनके उल्लंघन पर सजा दी जाती है। जैसे - दूसरो के सम्पति का अपहरण नही करना, चोरी नही करना, हत्या नही करना इत्यादि।
अपूर्णबाध्यता मूलक कर्तव्य जो व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर है। व्यक्ति इन्हे कर भी सकता है और नही भी कर सकता है। इन कर्तव्यो को नही करने पर व्यक्ति को राज्य की ओर से कोई सजा या दण्ड नही मिलती या नही दी जाती है।
जैसे - दान करना, दया एवं सहानुभूति दिखलाना इत्यादि। और ये कर्तव्य व्यक्ति के चारित्रिक गठन पर आधारित है। ये देश, काल और हमारी इच्छा पर निर्भर करते है।

काण्ट ने पूर्णबाध्यता मूलक कर्तव्य और अपूर्णबाध्यता मूलक कर्तव्य मे भी भेद किया है। - काण्ट के अनुसार पूर्णबाध्यता मूलक कर्तव्य निश्चित और भ्रम-रहित होते है। उनका कोई अपवाद नही है। उनका पालन करना पड़ता है। अपूर्णबाध्यता

मूलक कर्तव्य अनिश्चित होते हैं और उनका पालन करने के लिए किसी को बाध्य नहीं किया जा सकता है। लेकिनकाण्ट का यह वर्गीकरण दोषपूर्ण है। क्योंकि यह विभाग नैतिक नहीं वैधानिक है (Legal) है। अत. विशेष परिस्थितियों में हमारे कर्तव्य निश्चित होते हैं।

इसप्रकार कार्लाईल (Carlyle) का कहना है कि 'वही कर्तव्य करो जो तुम्हारे निकट है' (Do the duty that lies nearest thee.) मैकेंजी का भी कहना है कि 'मनुष्य जाति बादलों से उत्पन्न नहीं हुई है' (Human beings do not drop from the clouds.)।

महात्मा गाँधीजी का विचार है कि जब हम किसी कर्म के औचित्य पर विचार करने लगते हैं तो हमारे अन्तःकरण से एक आदेशसूचक आवाज निकलती है किन्तु यह आवाज सभी को सुनाई नहीं पड़ती। जो व्यक्ति इस आवाज को सुनने और इसके अनुकूल आचरण करने की क्षमता रखते हैं, वे निश्चय ही महात्मा या महापुरुष हैं। इसप्रकार गाँधीजी अन्तःकरण के आदेश के अनुकूल कर्म को ही कर्तव्य कहते हैं।

बेन (Bain) ने आवश्यक और वैकल्पिक नैतिकता में अन्तर बतलाते हुए बेन महोदय का कहना है कि जिस कर्तव्य का पालन अनिवार्य है और जिसके उल्लंघन से सजा मिलती है उसे आवश्यक नैतिकता कहते हैं। इसी प्रकार जिस कर्तव्य का पालन करना हमारी इच्छा पर आश्रित है जिसे हम वैकल्पिक नैतिकता कहते हैं। बेन का यह विचार अमान्य है और नैतिकता में इसप्रकार का भेद नहीं किया जा सकता है। अतः सभी कर्तव्य अनिवार्य है और उनका पालन आवश्यक है।

कुछ विद्वानों ने कर्तव्य के दो अलग भेद माने हैं।

Scanned with CamScanner

(i) विशेष कर्तव्य (Particular duty) (ii) सामान्य कर्तव्य (universal duty)।
विशेष कर्तव्य वह है जो विशेष व्यक्तियों या विशेष परिस्थितियों के लिए है जिन्हें विशेष कर्तव्य कहा जाता है। सामान्य कर्तव्य वैसे कर्तव्य, जो सभी के लिए है, जिन्हें सामान्य कर्तव्य कहा जाता है।

कर्तव्य के इस वर्गीकरण का कोई ठोस आधार नहीं है। इसलिए व्यक्ति और समाज में कोई विरोध नहीं है बल्कि स्वरूप दोनों परस्पर पूरक, इस प्रकार, विशेष कर्तव्य और सामान्य कर्तव्य में कोई विरोध नहीं है।

ब्रैडले (Bradley) महोदय जी ने मेरा स्थान और इसके कर्तव्य (My Station and its duties) के प्रसंग में बतलाया है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी खास परिस्थिति में कुछ गुणों को लेकर उत्पन्न होता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति में अपनी विचित्रता रहती है और इसी के अनुसार उसका कर्तव्य होता है। गीता में भी इसी प्रकार का उल्लेख किया गया है। गीता के अनुसार - व्यक्ति को अपने ही कर्तव्य करने में तत्परता दिखानी चाहिए, दूसरों के तथाकथित श्रेष्ठ कर्तव्यों की ओर न जाकर अपने निश्चित कर्तव्य पर ही ध्यान केन्द्रित रखना चाहिए।

इसलिए पिता के, माता के, पुत्र के और पड़ोसी के कर्तव्य अलग-अलग है। इस प्रकार हम निष्कर्षतः कह सकते है कि वास्तव में हमारा एक ही सर्वोच्च कर्तव्य (One supreme duty) है। बुद्धिमय आत्मा की प्राप्ति और उसके अन्तर्गत सभी कर्तव्यों का पालन ही सर्वोच्च कर्तव्य है।

THE END